इकाई 5. शूद्रक का जीवन परिचय एवं मृच्छकटिकम् की नाटकीय विशेषता

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

यह खण्ड दो की पांचवी इकाई है। इससे पूर्व की इकाइयों में आपने भारवि,श्रीहर्ष, जयदेव और भवभूति के विषय में विस्तृत अध्ययन किया। प्रस्तुत इकाई में आप शूद्रक के विषय में अध्ययन करेंगे कि शूद्रक कौन थे।

मृच्छकटिक के रचियता शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थे, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेघ यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिहांसन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि प्रवेश किया। शूद्रक युद्वो से प्रेम करते थे, प्रमाद रहित थे, तपस्वी तथा वेद जानने वालों में श्रेष्ठ थे, राजा शूद्रक को बड़े हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने का बड़ा शौक था, उनका शरीर था शोभन , उसकी गति थी मतंग के समान नेत्र थे चकोर की तरह, मुख था पूर्ण चन्द्रमाँ की भाँति। तात्पर्य यह है कि उनका समग्र शरीर सुन्दर था। वे द्विजो में मुख्य थे।

इस इकाई के अध्ययन से आप शूद्रक की वीरतामय जीवन के विषय में बता सकेंगे।

5. 2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- शूद्रक कौन थे इसका उल्लेख करेंगे
- शूद्रक के पुत्र कौन थे , परिचय देंगे।
- शूद्रक का जन्म स्थान कहाँ है , निर्णय करेंगे।
- शूद्रक की मुख्य कृति के विषय में परिचय देंगे।
- मृच्छकटिकम् में किसका वर्णन है , उल्लेख करेंगें।

5.3 शूद्रक का जीवन परिचय

मृच्छकटिक के रचियता शूद्रक का कुछ परिचय ग्रन्थ के आरम्भ (1। 4. 1। 5) में ही जीवन परिचय मिलता है। उसके अनुसार शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेध यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिहांसन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया। वह युद्वो से प्रेम करते थे, प्रमाद रहित थे, तपस्वी तथा वेद जानने वालों में श्रेष्ठ थे, राजा शूद्रक को बड़े हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने का बड़ा शौक था, उनका शरीर था शोभन , उसकी गति थी मतंग समान नेत्र थे चकोर की तरह, मुख था पूर्ण चन्द्रमाँ की भाँति। तात्पर्य यह है कि उनका समग्र शरीर सुन्दर था। वे द्विजो में मुख्य थे प्रतीत होता है की किसी अन्य लेखक ने यहाँ जान बूझ कर कह दिया है 'शूद्रकोऽग्निप्रविष्ट' स्वयं लेखक की लेखनी इस भूतकाल का प्रयोग कैसे कर सकती है। निः संदेह यह अंश प्रक्षेप है।

शूद्रक नामक राजा की संस्कृत - साहित्य में खूब प्रसिद्धि है। जिस प्रकार विक्रमादित्य के विषय में अनेक दंतकथायें है उसी प्रकार शूद्रक के विषय में भी है। कादम्बरी विदिशा नगरी में कथा-सरित्सागर में शोभावती तथा वेतालपंचविंशति में वर्धमान नामक नगर में शूद्रक के राज्य करने का वर्णन पाया जाता है । कथा सरित्सागर का कथन है कि किसी ब्राह्मण ने राजा को आसन्नमृत्यु जानकर उसे दीर्घ जीवन की आशा में अपने प्राण निछावर कर दिये थे। हर्षचरित में लिखा है शूद्रक चकोर राजा चन्द्रकेतू का शत्रु था। राजतरंगिणीकार स्थिर- निश्चलता के दृष्टान्त के लिये शूद्रक का स्मरण करते है। स्कन्दपुराण के अनुसार विक्रमादित्य के सत्ताईस वर्ष पहले शूद्रक ने राज्य किया था। प्रसिद्ध है की कालिदास के पूर्ववती रामिल तथा सोमिल नामक कवियों ने मिलकर 'शूद्रक कथा' नामक कथा लिखी थी। अतः शूद्रक इसके कर्ता नहीं है बहुत से लोग तो शूद्रक की सत्ता में ही विश्वास नहीं करते। परन्तु ये सब श्रान्त धारणाऐं हैं। तथ्य यह प्रतीत होते है कि विक्रमादित्य के समान ही शूद्रक भी ऐतिहासिक क्षेत्र से उठकर कल्पना जगत के पात्र माने जाने लगे थे। और जिस प्रकार ऐतिहासिक लोग प्रथम शतक में विक्रमादित्य के अस्तित्व के विषय में ही सन्देहशील थे उसी प्रकार शूद्रक के विषय में भी। आधुनिक शोध में दोनों ही ऐतिहासिक व्यक्ति सिद्ध होते है। ऐसी दशा में शूद्रक को मृच्छकटिक का रचियता न मानने वाले डा0 सिल्वाँ लेवी तथा कीथ मत स्वयं ध्वस्त हो जाता है। पिशेल ने जो दण्डी को इसका रचियता होने का श्रेय दिया है वह भी कालविरोध होने से भ्रान्त प्रतीत होता है। शूद्रक ऐतिहासिक व्यक्ति थे और वे ही मृच्छकटिक के यथार्थ लेखक थे।

जन्म समय - पुराणों में आन्ध्रभृत्य - कुल के प्रथम राजा शिमुक का वर्णन मिलता है। अनेक भारतीय विद्वान राजा शिमुक के साथ शूद्रक की अभिन्नता को अंगीकार कर इनका समय विक्रम की प्रथम शताब्दी में मानते है। यही यह अभिन्नता सप्रमाण सिद्ध की जा सके तो शूद्रक कालिदास के समकालीन अथवा उनके कुछ पूर्व के ही माने जायेंगे। परन्तु मृच्छकटिक की इतनी प्राचीनता स्वीकार करने में बहुतों को आपत्ति है।

वामनाचार्य ने अपनी काव्यालंकार - सूत्र वृति में 'शूद्रकादिरचिषु' प्रबन्धेषु' शूद्रक-विरचित प्रबन्ध का उल्लेख किया और 'द्यूतं हि नाम पुरूषस्य असिंहासनं राज्यम् ' इस मृच्छकटिक के द्यूत - प्रशंसा-परक वाक्य को उद्धृत भी किया है , जिससे हम कह सकते है कि आठवीं शताब्दी के पहले ही मृच्छकटिक की रचना की गई होगी। वामन के पूर्ववर्ती आचार्य दण्डी (सप्तम शतक) ने भी काव्यादर्श में 'लिम्पतीव तमोऽङ्गानि' मृच्छकटिक के इस प़द्यांश को अलंकारनिरूपण करते समय उद्धृत किया है। इन बहिरंग प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि मृच्छकटिक की रचना सप्तम शताब्दी के पहले ही हुई होगी। समय-निरूपण में मृच्छकटिक के अन्तरंग प्रमाणों से भी बहुत सहायता मिलती है। नवम अंक मे वसन्तसेना की हत्या करने के लिए शकार आर्य चारूदत्त पर अभियोग लगता है। अधिकरणिक के सामने यह पेश किया जाता है अन्त में मनु के अनुसार ही धर्माधिकारी निर्णय करता है।

अयं हि पातकी विप्रो न बध्यो मनुरब्रवीत्।
राष्ट्रादस्मातु निर्वास्यो विभवैरक्षतैः सह।।

इससे स्पष्ट ही है कि मनु के कथनानुसार अपराधी चारूदत्त अवध्य सिद्व होता है और धनसम्पति के साथ उसे देश से निकल जाने का दण्ड दिया जाता है। यह निर्णय ठीक मनुस्मृति के अनुरूप है।

न जातु ब्राह्मणं हन्यात् सर्वपापेष्वपि स्थितम्।
राष्ट्रादेनं बहिः कुर्यात् समग्रधनमक्षतम्॥
न ब्राहमणवधाद् भूयानधर्मो विद्यते भुवि।
तस्मादस्य वधं राजा मनसपि न चिन्तयेत्॥

अतः मृच्छकटिक की रचना मनुस्मृति के अनन्तर हुई होगी। मनुस्मृति का रचना काल विक्रम से पूर्व द्वितीय शतक माना जाता है जिसके पीछे मृच्छकटिक को मानना होगा। भास कवि के 'दरिद्र चारूदत' तथा शूद्रक के 'मृच्छकटिक' में अत्यन्त समानता पाई जाती है। मृच्छकटिक का कथानक बहुत विस्तीर्ण है, दरिद्रचारूदत्त का संक्षिप्त। मृच्छकटिक भास के रूपक के अनुकरण पर रचा गया है, अतः शूद्रक का समय भास के पीछे चाहिए। मृच्छकटिक के नवम अंक में कवि ने बृहस्पति को अंगारक (अर्थात् मंगल) का विरोधी बतलाया है। परन्तु वराहमिहिर ने इन दोनों ग्रहों को मित्र माना है।, प्रसिद्व1 अङारकविरूद्वस्य प्रक्षीणस्य बृहस्पतेः ग्रहोऽयमपरः पार्श्वे धूमकेतुरिवोत्यितः॥ (मृच्छ0 9 ।33)

ज्योतिषी वराहमिहिर का सिद्वान्त ही आजकल फलित ज्योतिष में सर्वमान्य है। आज कल भी मंगल तथा बृहस्पति मित्र ही माने जाते है, परन्तु वराहमिहिर के पूर्ववर्ती कोई-कोई आचार्य इन्हें शत्रु मानते थे, जिसका उल्लेख बृहज्जातक में ही पाया जाता है। वराहमिहिर का परवर्तीग्रन्थकार बृहस्पति को मंगल का शुत्र कभी नहीं माना जा सकता। अतः शुद्रक वराहमिहिर से पूर्व के ठहरते है। वराहिमिहिर की मृत्यु 589 ईस्वी में हुई थी, इसीलिए शूद्रक का समय छठी सदी के पहिले होना चाहिये।

इन सब प्रमाणों का सार है कि शूद्रक दण्डी (सप्तम शतक) और वराहमिहिर (षष्ट शतक) के पूर्ववर्ती थे, अर्थात् मृच्छकटिक की रचना पंचम शतक में मानना उचित है। और यह अविर्भावकाल नाटक में वर्णित सामाजिक दशा से पुष्ट होता है।

5.4 मृच्छकटिक की नाटकीय विशेषता

मृच्छकटिक में 10 अंक है। पहले अंक का नाम 'अलंकारन्यास' है। इसमें उज्जयिनी की प्रसिद्व वारवनिता वसन्तसेना को राजा का श्यालक शकार वंश में करना चाहता है। रास्ते में अँधेरी रात में विट तथा चेट के साथ शकार उसका पीछा कर रहा है। मूर्ख शकार के कथन से वसन्तसेना को पता चलता है कि वह आर्य चारूदत्त के मकान के पास ही है। अतः उसके घर में घुसती है। विदूषक मैत्रेय शकार को डॉट-डपट कर घर में घुसने से रोकता है। चारूदत्त से वार्तालाप करने के बाद शकार से बचने के लिये वसन्तसेना अपना गहना उसके घर पर रख आती है। दूसरे अंक का नाम 'द्युतक-संवाहक' है। दूसरे दिन सवेरे दो घटनाएं घटती हैं। संवाहक पहले चारूदत की सेवा में था, पीछे पक्का जुआरी बन जाता है। वह जुएं में बहुत सा धन हार जाता है जिससे वह चारूदत के घर भाग आता है। चारूदत उसे ऋण मुक्त कर देते है। संवाहक बौद्व भिक्षु बन जाता

है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में किसी भिक्षुक को कुचलना ही चाहता है कि उसका सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। चारूदत अपना बहु मूल्य दुशाला को उपहार में दे देते हैं। तीसरे अंक का नाम संधिच्छेद है। वसन्तसेना की दासी मदनिका शर्विलक सेवा से मुक्त करना चाहता है। वह ब्राह्मण है, परन्तु प्रेमपाश में बंधकर आर्य चारूदत्त के घर में सेंध मारता है। और वसन्तसेना का गहना चुरा लेता है। चतुर्थ अंक का नाम 'मदनिका-शर्विलक ' है जिसके शर्विलक अलंकार लेकर वसन्तसेना के घर जाता है और मदनिका को सेवा-मुक्त कर देता है। चारूदत की पतिव्रता पत्नी धूता अपनी बहुमूल्य रत्नावली उसके बदले में देती है। मैत्रेय रत्नावली लेकर वसन्तसेना के महल में जाता है और जुए में हार जाने का बहाना कर रत्नावली देता है। वसन्तसेना सायंकाल चारूदत्त के घर आने के लिए वादा करती है। पाँचवें अंक का नाम 'दुर्दिन' है। इसमें वर्षा का विस्तृत वर्णन है सुहावने वर्षाकाल में आर्य चारूदत उत्सुकता से वसन्तसेना की राह जोहते बैठे हैं। चेट वसन्तसेना के आगमन की सूचना देता है।

1.जीवो जीवबुधौ सितेन्दुतनयो व्यर्का विभौमाः कमात्
वीन्द्वर्का विकुजेन्दश्च सुहदः केषाच्चिदेवं मतम्।। (2|91)

चारूदत्त से प्रेम सम्मिलन होता है। उस रात वह वहीं बिताती है । षष्ठ अंक का नाम 'प्रवहणविपर्यय' है। तथा सप्तम का 'अर्थकापहरण'। प्रातः काल चारूदत पुष्पकरण्डक नामक बगीचे में गये है। उनसे भेंट करने के लिए वसन्तसेना जाना चाहती है, परन्तु भ्रम से शकार की गाड़ी में, जो समीप में खड़ी थी , जा बैठती है। इधर राजा पालक किसी सिद्ब की भविष्यवाणी पर विश्वास कर गोपाल के पुत्र आर्यक को कैदखाने में बन्द कर देता है आर्यक कारागृह से भागकर चारूदत्त की गाड़ी में चढ़ जाता है। श्रृंखला की आवाज को भूषण की झनझनाहट समझ गाड़ी हाँक देता है। रास्ते में दो सिपाही गाड़ी देखने जाते हैं जिनमें से एक आर्यक को देख उसकी रक्षा करने का वचन देता है और अपने साथी से किसी बहाने झगड़ा कर बैठता है आर्यक बगीचे में चारूदत से भेंट करता है, 'अष्टम अंक' का नाम 'वसन्तसेना' - मोचन' है। जब वसन्तसेना पुष्पकरण्डक उद्यान में पहुँचती है , तब प्राणप्रिय चारूदत्त के स्थान पर दुष्ट शकार - संस्थानक मिलता है , जो उसकी प्रार्थना न स्वीकार करने से वसन्तसेना का गला घोंट डालता है संवाहक भिक्षु बन गया है। वसन्तसेना को समीप के विहार में ले जाते है और योग्य उपचार से उस पुनरूज्जीवित करता है। नवम अंक में जिनका नाम 'व्यहार ' है, शकार चारूदत्त पर वसन्तसेना के मारने का अभियोग लगाता है कचहरी में जज के सामने मुकदमा पेश होता है। उसी समय चारूदत का बालक पुत्र रोहसेन-मृच्छकटिक (मिट्टीकी गाड़ी) लेकर आता है, जिसमें वसन्तसेना के दिये सोने के गहने है। इसी आधार पर चारूदत को फाँसी का हुक्म होता है। 'संहार 'नामक दशम अंक में उसी समय राज्य-परिवर्तन होता है। पालक को मार चारूदत का परम मित्र आर्यक राजा बन जाता है । वह चारूदत को क्षमा ही नहीं कर देता, प्रत्युत मिथ्याभियोग के कारण शकार को फाँसी का हुक्म देता है., परन्तु चारूदत के कहने से क्षमा कर देता है। वसन्तसेना के साथ चारूदत का व्याह सम्पन्न होता है। इसी अन्तिम प्रेम-मिलन के साथ यह रूपक समाप्त होता है। दस प्रकरण के कथावस्तु के दो अंश है -पहिला भाग चारूदत्

तथा वसन्तसेना का प्रेम दूसरा भाग आर्यक की राज्यप्राप्ति। शूद्रक ने पहले अंश को भास के 'दरिद्र-चारूदत्त नाटक से अविकल लिया है। शब्दतः और अर्थतः दोनो प्रकार की अपनी सम्पति प्राचीन ऐतिहासिक घटना के आधार पर लिखा गया मानते है। दोनों अंशों को शूद्रक ने बड़ी सुन्दरता के साथ सम्बद्व किया हैं।

चरित्र-चित्रण- शूद्रक चरित्र-चित्रण में खूब सिद्धहस्त हैं। इनके पात्र जीते-जागते है., सजीवता की मूर्ति हैं। प्रत्येक पात्र में कुछ विशेषता है। मृच्द्कटिक का नाटक चारूदत हैं । प्रकरण का नायक धीरप्रशान्त ब्राह्मण , वणिक् या मन्त्री हुआ करता है। चारूदत ब्राह्मण है तथा धीर-प्रशान्त हैं शूद्रक ने चारूदत के रूप में भारत के आदर्श नागरिक का चित्र खींचा है। वह सदाचार का निदर्शन है। (1। 48) -

दीनानां कल्पवृक्षः स्वगुफलनतः सज्जानानां कुटुम्बी
आदर्शः शिक्षितानां सुचरितनिकषः शीलवेलासमूद्रः।
सत्कर्ता नावमन्ता पुरूषगुणनिधिर्दक्षिणोदारसच्वो
त्द्योकः श्लाध्यः स जीवत्यधिकगुणतया चोच्छवसन्तीव चान्ये ।।

चारूदत्त दीनों के कल्पवृक्ष हैं। दरिद्रों की सहायता करने से उन्हें निर्धनता प्राप्त हो जाती है, परन्तु फिर भी दीनों की सहायता करने से विरत नहीं होता। उसमें आत्माभिमान की मात्रा खूब है। उसे यह जानकर अत्यन्त दुःख होता है कि हमारे घर से छूछे हाथ लौट जानेवाला चोर अपने मित्रो से मेरी दरिद्रता की निन्दा करेगा। स्वभाव उसका बड़ा उन्नत है। वसन्तसेना का अलंकार चोरी चला जाता है, परन्तु उसे प्रसन्नता होती है कि उसके घर में सेंध मारने वाला चोर विफल-मनोरथ होकर नहीं गया। वसन्तसेना के अल्पमूल्य भूषण के बदले में अपनी पत्नी की बहुमूल्य रत्नावली देने में वह तनिक भी नहीं हिचकता। जो शकार उसके जीवन का गाहक था, जो उस पर वसन्तसेना के मारने का मिथ्या अभियोग लगाकर शूली पर चढ़ाये जाने का कारण था, उसी दृष्टबुद्वि मूर्ख शकार को वह क्षमा कर देता है। इस नाटक में सचमुच चारूदत्त के रूप में हम आर्दश ' आर्य सज्जन का मनोरम चित्र पाते है। भारतीय दृष्टि से पूर्ण सज्जनता का जीवितरूप हमें आर्य चारूदत के रूप में प्राप्त होता है। फलतः वे 'परफेक्ट जेन्टिलमेन' के जीवन्त उदाहरण हैं।

वसन्तसेना उज्जयिनी की एक वेश्या है जो इस प्रकरण की नायिका है। उसके चरित्र में हम अनेक स्त्रीसुलभ गुणों का सन्निवेश पाते हैं। वेश्या होने पर भी वह सच्चे प्रेम का मूल्य जानती है। माता के आग्रह करने पर भी वह शकार की संगति नही चाहती और विरोध करने पर भी सदाचारी आर्य चारूदत्त की प्रेमपात्री बनने के लिए वह सतत उद्योगकरती है। उसका ह्दय अत्यन्त कोमल है। सेवकों पर दया करना उसका स्वभाव है। यद्यपि शकार उसे मार डालने का उद्योग करता है, तथापि वह अपने सद्गुणों के कारण जीवित बच जाती है। वसन्तसेना के अतिरिक्त अन्य पात्रों के भी चरित्र-चित्रण में शूद्रक को सफलता प्राप्त हूई है। धूता सच्ची पतिव्रता हिन्दू नारी है, जो अपने पतिदेव की प्रसन्नता के लिए कठिन से कठिन संकट झेलने के लिए भी उपस्थित है। अपने पति को कलंक से बचाने के लिये वसन्तसेना के अल्पमूल्य

आभूषण के लिए बहुमूल्य रत्नावली देते समय उसे तनिक भी दुविधा नहीं होती। रोहसेन भी स्निगध हृदय पुत्र है। मैत्रेय केवल मोदक से अपनी उदर-ज्वाला को शान्त करनेवाला, 'औदरिक' पेटू नहीं है, न वह केवल हास्य का साधन है, प्रत्युत वह एक सच्चा मित्र है। विपत्ति में साथ देनेवाला सच्चा बन्धु है। अन्य साधारण पात्रों में शर्विलक का चरित्र सज्जनता तथा दुर्जनता का अपूर्व मिश्रण है। वेश्या की गृहदासी मदनिका को अपनी प्रिय -पात्रों बनाने में यह ब्राह्मण देवता तनिक भी नहीं सकुचाते। उसे ऋण मुक्त करने के लिए चोरी करने में उसे कुछ भी लज्जा नहीं, परन्तु अपने मित्र आर्यक के कारागृह में बन्धन की वार्ता सुन वह अपनी प्रणयिनी को छोड सहायता करने के लिये खम ठोंककर 'मैदान जंग में आ जुटता है।

मृच्छकटिक में सबसे विचित्र नाटकीय पात्र है- शकार। यह राजा का श्यालक है। नाम है संस्थानक यह गर्व का जीता-जागता पुतला है। उसमें दया छूकर भी नहीं है। वसन्तसेना को अपने प्रणयपाश में बाँधना चाहता है, परन्तु वह इस मूर्ख को पसन्द नहीं करती है। शकार चारूदत्त का अकारण शत्रु है। वसन्तसेना का गला अपने ही हाथ घोट डालता है, परन्तु दोष मढ़ता है चारूदत के सिर पर। अपने किये कर्म का फल चखने का भी सुयोग आता है। परन्तु चारूदत्त उसे क्षमा कर देता है। शकार के कथन सर्वथा क्रमहीन, लोक-विरूद्ध तथा व्यर्थ होते है। इसकी शकार -बहुला भाषा भी शकारी के नाम से प्रसिद्व है। शकार की भाषा तथा तात्पर्य के लिए श्लोक प्रर्याप्त होगा (1।25) -

झाणज्झणन्तबहुभूशणशद्दमिश्शं किं दोवदी विअ पलाअशि लामभीदा।
एशे हलामि शहशति जधा हणूमें विश्शावशुश्श बहिणिं विअतं शुभद्दम्।।

अरी ? अपने गहनों को झनझनाती हुई, राम से डरी हुई द्रौपदी की तरह क्यों भाग रही हो ? मै तुम्हें उसी भॉति ले भगता हूँ, जिस प्रकार हनुमान् विश्वावसु की भगिनी सुभद्रा को ले भागे थे। रामायण तथा महाभारत की कथा की भी अच्छी जानकारी है शकार को ! लोकविरूद्व वृत का निदर्शन इससे बढ़कर और क्या हो सकता है। 'शकार' की अवतारणा प्रथम तथा अन्तिम बार इसी नाटक में हुई है, इसलिए उसकी ओर आलोचकों का ध्यान होना स्वाभविक है। वह राजा की रक्षता का भाई है और इस पद की भूयसी प्रतिष्ठा का ज्ञान ही उसके अभिमान तथा अहंकार का एक जीता-जागता पुतला बनाये हुए है। नाटक में न तो उसके वर्ण संकेत है न उसके देश का। डाक्टर सिल्वॉ लेवी की यह कल्पना है वह शक जाति का था और उसका नाटक में प्रवेश उस युग का स्मारक है जब भारतीय राजा लोग शकदेश की स्त्रियों को अपनी महलों में विवाहिता या रक्षिता बनाकर रखा करते थे। शकार की विचित्र भाषा तथा भारतीय परम्परा का स्थूलतम अज्ञान इस कल्पना के लिए आश्रम माने जा सकें है, परन्तु इसकी पर्याप्त पुष्टि के साधन आज भी अपर्याप्त है। सबसे महत्व की बात यह है कि संस्कृत के नाटककार ने किसी भी विदेशी पात्र की कल्पना अपने नाटकों में नहीं की है। अतः यह कल्पना रोचक होने पर भी तक पुष्ट नहीं मानी जा सकती है।

सामाजिक दशा

मृच्छकटिक में तत्कालीन हिन्दू-समाज का सच्चा चित्र हमें मिलता है। राजा का प्रभुत्व

अधिक अवश्य था, परन्तु वह अपने मन्त्रियों की सहायता से राज्य-संचालन किया करता था। पुलिस का इन्तजाम भी उस समय अच्छा था-मनु की प्रामाणिकता सर्वत्र मानी जाती थी। अधिकरणिक (जज) की सहायता करने के लिए 'असेसर 'हुआ करते थे , जिसमें ब्राह्मण तथा साहुकारों को भी जगह मिलती थी वैश्यों का उस समय अच्छा, संगठन था। वे दूर देशों से व्यापार किया करते थे-विदेशों में जहाज भी आया-जाया करते थे -

आपार्थमक्रमं व्यर्थ पुनरूक्तं हतोपमम्।
लोकन्यायविरूद्व च शकारवचनं विदुः॥

ब्राह्मण का काम केवल अध्ययन -अध्यापन ही नहीं था, बल्कि उनमें भी बड़े धनाढय सम्भवतः व्यापारी से धन प्राप्त करने वाले-व्यक्ति थे। आर्य चारूदत्त के पितामह बड़ी भारी सेठ थे। ब्राह्मण यज्ञ किया करते थे-उनके घर मन्त्रपाठ से सदा गूंजा करते थे। ब्राह्मण-धर्म पर खूब विश्वास था। उस समय की धार्मिक चर्चा आजकल से भिन्न न थी संध्यावन्दन बलि देना, देवताओं के मन्दिरों में सायंकाल को दीप-दान आदि आजकल की तरह उस समय भी प्रचलित थे। इन्द्रध्वज तथा कामदेवोत्सव आदि उत्सवों का सर्वत्र प्रचार था। ब्राह्मणधर्म के अतिरिक्त बौद्धधर्म भी सम्मुन्नत दशा में था चैत्य और विहार भिक्षुओं के लिये बने थे, जिनमें रोगियों की शुश्रूषा भी हुआ करती थी उस समय लोग धनाढय थे-वसन्तसेना के महलमें राजसी ठाटबाट था। इतना होने पर भी दाम देकर खरीदे गये दासों की प्रथा उस समय थी परन्तु क्रीतदासों की दशा बहुत अच्छी थी। उनकें साथ मालिक का व्यहार बहुत अच्छा होता था। उस युग में उज्जयिनी भारतवर्ष की एक समृद्ध नगरी थी, जहॉ पश्चिम समुद्र के बन्दरगाह भरूकच्छ (वर्तमान 'भड़ोंच) के साथ सीधा आवागमन का सम्बध था और इसी मार्ग से विदेशों से आनेवाली वस्तुएं भारत के भीतर आती थीं। समृद्धिनाना प्रकार की बुराईयों को भी पैदा करती है। फलतः जुओं और चोरी जैसे जघन्य व्यावसाय दिन-दहाड़े करनेवाले लोगों की कमी न थी। नगर में 'वेशवाट' की सत्ता उसके नागरिकों की विदग्धता , केलिशीलता तथा भववुक्ता की पर्याप्त परिचायिका है। रूपाजीवी वेश्या के साथ उदात्तचरितात्र कलाप्रवीण गणिका (जैसे वसन्तसेना) का भी अस्तित्व नगरी की महत्ता का द्योतक था। राजशक्ति बहुत ही क्षीण थी। शासन बेहद कमजोर था। जनरक्षण का इतना कुप्रबन्ध या कुप्रबन्धाभाव था किं शाम होते ही बड़े घरों की बहू-बेटियाँ घर से बाहर सड़क पर आने में भी भय खाती थीं कि कही उनके इज्जत का गहना कोई बदमाश कही से टूट न पड़े। नगर के रक्षे रक्षी पुरूष (पुलिस) वहॉ अवश्य विद्यमान थें, परन्तु शत्रु-मित्र की परख करने में बड़ी ढिलाई की जाती थी। राजा के इस कुप्रबन्ध के कारण ही घंटों में सिंहासन उलट जाता था और दूसरा राजा आ धमकता था। नाटक में प्रदर्शित राज्य-परिवर्तन का रहस्य इसी दुर्बल राजशक्ति के भीतर छिपा हुआ है। आर्यचारूदत्त अपने पैतृक कार्य को छोड़कर व्यापार के कार्य में व्यस्त थे आर्यचारूदत्त के पितामह इसी प्रकार के एक धनवान सेठ थे। ब्राह्मणों के भीतर भी विशेष बुराई तथा छल-कपट का प्रवेश हो गया था और ब्राह्मण-युवकों में से अनेक पुरूषों का जीवन जुआ और चोरी में बीतता था शर्विलक ऐसा ही ब्राह्मण है, जो अपने पवित्र जनेउ की भी हॅसी उड़ाने से बाज नहीं आता बौद्व धर्म भी सम्पन्नदशा में अपना समय बिता रहा

था, परन्तु इसके भी अनुयायियों में निकम्मे लोग भर गये थे। जो सर्वथा बेकाम तथा लाचार होता वह बौद्व बिहार में भिक्षु बनकर अपना कालक्षेपे करता ''संन्यासं कुलदूषणैरिव जनै''-(5।14)का लक्ष्य ऐसे ही लोगो की और है। श्रमण का दर्शन 'अनाभ्युदयिक' माना जाता था। गरज यह है कि वह युग समुद्धि का युग था और उसके साथ आनेवाली सब बुराईयों के लिए वहॉ पूरा दरवाजा खुला था। ऐसे भ्रष्ट वातावरण के भीतर से 'चारूदत्त' जैसे आदर्श तथा सच्चरित्र पात्र की कल्पना सचमुच कवि की विमल प्रतिभा का निदर्शन है।

प्राकृत का वैशिष्टय

मृच्छकटिक प्राकृत भाषा की दृष्टि से एक नितान्त उपादेय रूपक है। यहॉ जितनी भाषाएं तथा विभाषायें प्राकृत की उपलब्ध होती है उतनी अन्य किसी नाटक में नहीं, जान पड़ता है कि भरत के भाषाविधान (नाटकशास्त्र.अध्याय 18) को लक्ष्य में रखकर शूद्रक ने इन भाषाओं का प्रयोग भिन्न – भिन्न पात्रों के भाषणों के लिए किया है। टीकाकार पृथ्वीधर के कथनानुसार इस प्रकरण में शौरसेनी. मागधी . अवन्तिका . प्राच्या. शकारी . चाण्डाली तथा ढाक्की इन सात प्राकृतों का प्रयोग किया है . जिनमें से प्रथम चार को वह 'भाषा' मानता है तथा अन्तिम तीन शकारी चाण्डाली तथा ढाक्की को विभाषा। वररुचि जैसे मान्य प्राकृत व्याकरण के कर्ता ने 'विभाषा' के भाषा से पार्थक्य तथा वैशिष्टय का समुचित प्रतिपादन नहीं किया है। 'विभाषा' या तो वह प्राकृत भाषा है जो कवि के द्वारा किसी पात्र-विशेष के बोलचाल के लिए ही कल्पित की गई है अथवा जिसमें नियमों का 'बाहुलकात्' प्रयोग होता है। पृथ्वीधर के अनुसार सूत्रधार . नटी रदनिका. मदनिका , वसन्तसेना , उसकी माता , चेट , कर्णपूरक , धूता , श्रेणी तथा शोधनक (11 पात्र) शौरसेनी बोलते है। संवाहक , तीनों चेट भिक्षु तथा रोहसेन (छः पात्र) मागधी का प्रयोग करते है। वीरक तथा चन्दन अवन्ती बोलते है , तो विदूषक 'प्राच्य' बोलते है शकार की भाषा 'शकारी' है , दोनों चाण्डाली , माथुर और द्यूतकर की भाषा ढाक्की है। इन भाषाओं में शौरसेनी तथा मागधी तो सुप्रख्यात तथा बहुशः व्याख्यात भाषायें हैं। अवन्ती तथा प्राच्य का पृथ्वीधर द्वारा विहित लक्षण-नितान्त अशुद्व है; क्योकि यह लक्षण इन पात्रों की भाषाओं में नहीं मिलता। मार्कण्डेय कवीन्द्र (11 वीं शती) ने अपने 'प्राकृतसर्वस्व' में इनके शुद्ध लक्षण देने की कृपा की है। उनके मतानुसार 'प्राच्या' की प्रकृति शौरसेनी है अर्थात् शौरसेनी के आधार पर कतिपय परिवर्तनों से 'प्राच्य' निष्पन्न हाकती है। इन नियमों में--'मूर्ख' का -'मूरूक्ख' , 'भवती' का 'भोदि' , 'वक' का 'वक्नु' या बंकुभ' , नीच पात्र के सम्बोधन में आकर का दीर्घत्व आदि कतिपय मान्य नियम है। आवन्ती महाराष्ट्रीय तथा शौरसेनी के मिश्रण से निष्पत्र है, जिसमें सदृक्ष =तूण , दृश=पेच्छ अथवा इरिस , भविष्य सूचक प्रत्यय ज्ज , याज्जा (भोज्जा=भविष्यति) आदि मुख्य है। लेखक की तो यह दृढ़ धारणा है, कि इन भाषाओं के प्राचीन लक्षणों का निर्देश किसी कारण से नष्ट हो गया था और इसीलिए इस नाटक में उपलब्ध तत् भाषाओं के समीक्षण पर ही मार्कण्डेय ने अपना नियम बनाया है। इसीलिए वे नियम पूरे तौर से न मिलते है न सुसंगत होते हैं।

मागधी में शकार तथा ककार की बहुलता लाने से शकार के ऊटपटांग अनर्गल भाषण के लिए

,शूद्रक के द्वारा 'कल्पित' भाषा है। चाण्डाली की भी यही दशा है ढक्की वस्तुतः ढक्क देश की भाषा थी , जो पंजाब का पूर्वीभाग माना जाता था। इस भाषा में उकार की इतनी बहुलता है कि यह अपभ्रंश की ओर सचमुच खुलता है। मार्कण्डेय कवीन्द्र ने किसी हरिश्चन्द्र नामक प्राकृत वैयाकरण की सम्मति दी है, जो ढक्की सचमुच अपभ्रंश ही मानते थे1 । भरत के द्वारा निर्दिष्ट उकारबहुला भाषा हिमवत् , सिन्धुसौवीर देशों में बोली जाती थी। लेखक की सम्मपति में ढक्क देश सिन्धुसौवीर से मिला-जुला पंजाब का पूरवी भाग प्रतीत होता है और इसीलिए दोनों की भाषाओं में साम्य होना है और इसीलिए दोनों की भाषाओं में उचित है।

शूद्रक की काव्यकला

शूद्रक की शैली बडी़ सरल है। बड़े-बड़े छन्दों का बहुत कम प्रयोग किया गया है। नये-नये भाव स्थान -स्थान पर मिलते थे। इस प्रकरण का मुख्य रस श्रृंगार है। रस की विभिन सामग्री से परिपुष्ट कर श्रृगांर का सुन्दर रुप कवि ने दिखलया है। शुद्रक ने वर्षा का बड़ा विशद वर्णन किया है। इसमें चमत्कार -जनक अनेक सूक्तियाँ है।(9।14)--

चिन्तासक्तनिमग्नमन्त्रिसलिलं दूर्तोमिशंखाकुलं
पर्यन्तस्थितचारनमकंर नागाश्वहिस्त्राश्रयम्।
नानावाशककड़.पक्षिरुचिरं कायस्थसर्पास्पदं
नीतिक्षुण्णतटचि च राजकरणं हिस्त्रैः समुद्रायते ।।

इस श्लोक में राजकरण --कचहरी --का खूब सच्चा वर्णन किया गया है। शूद्रक का कहना है कि कचहरी समुद्र की तरह जान पड़ती है। चिन्तामग्न मन्त्री लोग जल है, दूतगण लहर तथा शंख की तरह जान पड़ते है-- इधर-उधर दूर देशों में घूमने के कारण दोनों की यहॉ समता दी गई है। चारों ओर रहनेवाले चोर--आजकल के खुफिया पुलिस--घड़ियाल हैं। यह समुद्र हाथियों तथा घोड़ों के रुप में हिंस्त्र पशुओं से युक्त् है। तरह-तरह के ठग तथा पिशुन लोग बगुले है। कायस्थ (मुंशी लोग) जहरीले सर्प हैं। नीति से इसका तट टूटा हुआ है। यह प्राचीन काल के राजकरण को वर्णन है; आजकल की कचहरी तो कई अंशों में इससे भी बढकर है। कचहरी में पहले-पहले पैर रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को शूद्रक के वर्णन की सत्यता का अनुभव पद-पद पर होता है।

शर्विलक के चरित्र का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। ये ब्राह्मण देवता आर्य चारूदत के घर में रात को सेंध मारने जाते है। पहुँचने पर उन्हें मालूम पड़ता है कि वह अपना मानसूत्र भूल आये है। झटपट गले में पड़े रहनेवाले डोरे की--जनेऊ की--सुधि उन्हें हो जाती है। बस, आप इसी से अपना कार्य सम्पादन करते हैं। इस चौर्य-प्रसंग में यज्ञोपवीत की उपयोगिता सुन लीजिये (3।17)--

यज्ञोपवीतं हि नाम ब्राह्मणस्य महदुपकरणद्रव्यम् , विशेषतोऽस्मद्विधस्य ,! कुतः एतेन मापयति भितिषु कर्ममागनितेन मोचयति भुषणसंप्रयोगान्। उद्घाटको भवति यन्त्रदृढे कपाटे दष्टस्य कीटभुजगैः परिवेष्टनं च ।।

1.हरिश्चन्द्रस्त्मिां भाषामपभ्रंश इतीच्छति।

अपभ्रंशो हि विद्वद्भिर्नाटकादौ प्रयुज्यते ।। (प्राकृतसर्वस्य 16।2)
2.हिमवत्-सिन्धुसौवीरान् येऽन्यदशान् समाश्रिताः।
उकारबहुला तेषु नित्यं भाषां प्रयोजयेत्।। (नाटकशास्त्र ।8147)
ब्राहाणों के लिए , जनेऊ बड़े काम कि चीज है, विशेष करके हमारे जैसे (चार)ब्राह्मणों के लिए ,क्योंकि जनेऊ से भीत पर सेंध मारने की जगह को नापते हैं। आभूषण के बंधन जनेऊ के द्वारा छुडाये जाते है और यदि साँप या कीट काट खाय, तो उसे जनेऊ से बाँध भी सकते है (जिसमें विष न चढे)। ठीक ही है; चोर ब्राह्मण के लिये जनेऊ का और उपयोग हो ही क्या सकता है ?

शूद्रक की नाटककला

कला की दृष्टि से 'मृच्छकटिक' निःसंदेह एक सुन्दर तथा सफल नाटक है। शूद्रक ने संस्कृत-साहित्य में शायद पहिली बार मध्यम श्रेणी के लोगों को अपने नाटक का पात्र बनाया है। संस्कृत का नाटक उच्च श्रेणी के पात्रों के चित्रण में तथा तदनुकूल कथानक के गुम्फन में अपनी भारती को चरितार्थ मानता है, परन्तु शूद्रक ने इस क्षुण्ण मार्ग का सर्वथा परित्याग कर अपने लिए एक नवीन पंथ का ही अविष्कार किया है। उसके पात्र दिन-प्रतिदिन हमारे सड़कों पर और गलियों में चलने फिरनेवाले , रक्तमांस से निर्मित पात्र है, जिनके काम को जाँचने के लिए न तो कल्पना को दौड़ाना पड़ता है और न जिनके भावों को समझने के लिए मन के दौड़ की जरूरत होती है। मृच्छकटिक की इसीलिए शास्त्रीय संज्ञा 'संकीर्ण प्रकरण' की है, क्योंकि इसमें लुच्चे-लबारों, चोर-जुआरों; वेश्या-विटों का आकर्षण वायु-मण्डल है, जहाँ धौल-धुपाड़ों की चौकड़ी सदा अपना रंग दिखाया करती है। आख्यान तथा वातावरण की इस यथार्थवादिता और नैसर्गिकता कारण ही मृच्छकटिक पाश्चात्य आलोचकों की विपुल प्रशंसा का भाजन बना हुआ है। यहाँ कथावस्तु की एकता का भंग नहीं है, यद्यपि वर्षाकाल नाटक के व्यापार में शैथिल्य अवश्य ला देता है। शूद्रक का कविहृदय स्वयमापतित वर्षाकाल की मनोहरता से रीझ उठता है और वह कथा के सूत्र को छोड़कर उसमें मनोहर वर्णन में जुट जाता है सिवाय इस वर्णनात्मक विषय के विभित्र घटनाओं के सूत्रों का एकीकरण बड़ी सुन्दरता से किया है। 'दरिद्र-चारूदत' के समान इसमें केवल एकात्मक प्रणयाख्याम नहीं है, प्रत्युत उस के साथ एक राजनैतिक आख्यान का भी पूर्ण सामंजस्य अपेक्षित है। शूद्रक ने इन दोनों आख्यानों को एक अन्विति को एक उन्विति के भीतर रखने का पूर्ण प्रयास किया और इसमें उनमें इन्हें पूर्ण सफलता भी मिली है। पात्रों के विषय में यह भूलना न चाहिए कि वे किसी वर्ग -विशेष के प्रतिनिधि ('रिप्रिजेन्टेटिव) न होकर स्वयं 'व्यक्ति' है। वे 'टाइप' नहीं हैं, प्रत्युत 'व्यक्ति' है। मृच्छकटिक के अमेरिकन भाषान्तरकार डॉ0 राइडर ने ठीक ही कहा है कि इस नाटक के पात्र 'सार्वभौम' (कास्मोपालिटन) है, अर्थात् इस विश्व के किसी भी देश या प्रान्त में उनके समान पात्र आज भी चलते-फिरते नजर आते है। इसके सार्वभौम आकर्षण का यही रहस्य है। यूरोप या अमेरिका की जनता के सामने इस नाटक का अभिनय सदा सफल इसलिए हो पाया है कि वह इसके पात्रों से मुठभेंड़ अपने ही देश में प्रतिदिन किया करती है। इनमें पौरस्त्य चाकचिक्य की झाँकी का अभाव कभी भी इन्हें दूरदेशस्थ पात्रों का आभास भी नहीं प्रदान करता। डाक्टर कीथ भले ही इन्हें पूरे 'भारतीय' होने

की राध दें , परन्तु पात्रों के चरित्र में कुछ ऐसा जादू है कि वह दर्शकों के सिर पर चढ़कर बोलने लगता है। आज भी माथुरक जैसे सभिक तथा उसके सहयोगियों का दर्शन कलकत्ता तथा बम्बई की ही गलिया में नहीं होता है, प्रत्युत लण्डन के ईस्ट एण्ड़ में भी वे घूमते-घामते घौले-घप्पड़ जमाते नजर आते है, जहाँ का 'जुआड़ियों का अड्डा' (गैम्बलिंग डेन) आज भी पुलिस की नजर बचाकर दिन दहाडे चला करता है । तात्पर्य यह है कि शूद्रक के पात्र मध्यम तथा अधम श्रेणी के रोचक पात्र है, जिनका इतना यथार्थ चित्रण संस्कृत के रूपकों में फिर नहीं हुआ । शूद्रक की नाटककला वस्तुतः श्लाघनीय है स्पृहणीय है ।

अभ्यास प्रश्न 1

1-मृच्छकटिकम् के रचयिता कौन है ।

2- मृच्छकटिकम् के आरम्भ में किसका वर्णन है ।

3-शूद्रक किस नगर के राजा थे ।

4-शूद्रक किस शास्त्र में प्रवीण थे ।

5-वसन्तसेना कौन थी ।

अभ्यास प्रश्न 2

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. मृच्छकटिकम् का अर्थ है-

(क) लोहे का घोड़ा (ख) सोने का घोड़ा

(ग) मिट्टी का गाड़ी (घ) लकड़ी की गाड़ी

2. मृच्छकटिकम् की मुख्य नायिका है-

(क) मदनिका (ख) वसन्तसेना

(ग) गौरी (घ) पार्वति

3. शूद्रक भक्त है-

(क) कृष्ण का (ख) शिव का

(ग) विष्णु का (घ) ब्रह्म का

4. मृच्छकटिकम् का सबसे विचित्र नाटकीय पात्र है-

(क) वसन्तसेना (ख) चारूदत्त

(ग) मदनिका (घ) शकार

5. शकार का राजा से सम्बन्ध है-

(क) साला का (ख) मामा का

(ग) भाई का (घ) पिता का

5.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि मृच्छकटिकम् के विषय में शूद्रक कहते हैं कि कवि अपनी रागात्मक अनुभूति तथा कल्पना से वर्ण्य विषय तथा वस्तु को भावात्मक बना देता

है। नाट्यशास्त्र संस्कृत भाषा का परमरमणीय अंग है। शूद्रक ने संस्कृत-साहित्य में शायद पहिली बार मध्यम श्रेणी के लोगों को अपने नाटक का पात्र बनाया है। संस्कृत का नाटक उच्च श्रेणी के पात्रों के चित्रण में तथा तदनुकूल कथानक के गुम्फन में अपनी भारती को चरितार्थ मानता है, परन्तु शूद्रक ने इस क्षुण्ण मार्ग का सर्वथा परित्याग कर अपने लिए एक नवीन पंथ का ही अविष्कार किया है। उसके पात्र दिन-प्रतिदिन हमारे सड़कों पर और गलियों में चलने फिरनेवाले , रक्तमांस से निर्मित पात्र है, जिनके काम को जाँचने के लिए न तो कल्पना को दौड़ाना पड़ता है और न जिनके भावों को समझने के लिए मन के दौड़ की जरूरत होती है। मृच्छकटिक की इसीलिए शास्त्रीय संज्ञा 'संकीर्ण प्रकरण' की है, क्योंकि इसमें लुच्चे-लबारों, चोर-जुआरों; वेश्या-विटों का आकर्षण वायु-मण्डल है, जहाँ धौल-धुपाड़ों की चौकड़ी सदा अपना रंग दिखाया करती है। आख्यान तथा वातावरण की इस यथार्थवादिता और नैसर्गिकता कारण ही मृच्छकटिक पाश्चात्य आलोचकों की विपुल प्रशंसा का भाजन बना हुआ है। यहाँ कथावस्तु की एकता का भंग नहीं है, यद्यपि वर्षाकाल नाटक के व्यापार में शैथिल्य अवश्य ला देता है। शूद्रक का कविहृदय स्वयमापतित वर्षाकाल की मनोहरता से रीझ उठता है और वह कथा के सूत्र को छोड़कर उसमें मनोहर वर्णन में जुट जाता है सिवाय इस वर्णनात्मक विषय के विभित्र घटनाओं के सूत्रों का एकीकरण बड़ी सुन्दरता से किया है।

5.5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
द्युतम्	जुआँ
दीनानाम्	गरीबो के लिये
कल्पवृक्षः	कल्पवृक्ष
सज्जानानां	सज्जनों का
कुटुम्बी	परिवार के समान
सत्कर्ता	अच्छा कर्म करने वाला
ष्लाघ्यः	प्रशंसनीय
हिमवत्	बर्फ के समान

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 –(1) शूद्रक (2) राजा शूद्रक (3) वर्धमान नगर के (4) हस्ति शास्त्र में (5) उज्जयिनी की वेश्या अभ्यास प्रश्न 2 – 1. ग 2. ख 3. ख 4. घ 5. क

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मृच्छकटिकम् ,लेखक -शूद्रक , प्रकाशक - चौखभा संस्कृत भारति चौक वाराणसी

5.8 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् ,लेखक -शूद्रक , प्रकाशक - चौखभा संस्कृत भारति चौक वाराणसी

5. 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1 . वसन्तसेना कौन थी उसका सामान्य रूप से वर्णन कीजिये

2. शूद्रक की नाट्यकला का वर्णन कीजिए।

3. वसन्तसेना का चरित्र चित्रण कीजिए।